नानाजी जन्मोत्सव

१७ मई २०२५

राम जपु, राम जपु, राम जपु, बावरे ।
घोर-भव नीर-निधि नाम निज नाव रे ॥ १॥
एक ही साधन सब रिद्धि सिद्धि साधि रे।
ग्रसे कलि रोग जोग संजम समाधि रे ॥ २ ॥
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो बाम रे।
राम-नाम ही सों अंत सबहीको काम रे ॥ ३॥
जग नभ-बाटिका रही है फलि फूलि रे।
धुवाँ कैसे धौरहर देखि तू न भूलि रे॥४॥
राम-नाम छाँड़ि जो भरोसो करै और रे।
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर रे॥५

भावार्थ - हे मूर्ख, तू राम नाम का जप कर। इस घोर संसार रूपी सागर में नाम ही नौका है। राम नाम ही वह साधन है जिससे समस्त ऋद्धि -सिद्धियों को प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि कलियुग रूपी रोग ने योग, संयम व समाधि आदि साधनों को ग्रस लिया है। जो अच्छा है, जो बुरा है, जो शुभ है या अशुभ, सभी का अंत श्री राम नाम में ही होता है। यह संसार वैसा ही है जैसे आकाश में वाटिका, जो अत्यंत फल-फूल रही है (अर्थात काल्पनिक है)। जैसे धुआँ दृश्य को धूमिल कर हमें भ्रमित करता है, वैसा ही स्वभाव इस संसार दृश्य का है। राम नाम को छोड़कर अन्य के ऊपर भरोसा करना ऐसा ही है जैसे कोई सुंदर पकवानों की थाली छोड़कर और मांग-मांग कर कुत्ते का कौर खाएं ।

....

सौंप दिये मन प्राण तुम्हीं को सौंप दिये ममता अभिमान।
जब जैसे, जी चाहे बरतो, अपनी वस्तु सर्वथा जान।।
मत सकुचाओ मनकी करते, सोचो नहीं दूसरी बात।
मेरा कुछ भी रहा न अब तो, तुमको सब कुछ पूरा ज्ञात।।
मान-अमान, दुःख-सुख से अब मेरा रहा न कुछ सम्बन्ध।
तुम्हीं एक कैवल्य मोक्ष हो, तुमही केवल मेरे बन्ध।।
रहूँ कहीं, कैसे भी, रहती बसी तुम्हारे अंदर नित्य।
छूटे सभी अन्य आश्रय अब, मिटे सभी सम्बन्ध अनित्य।।
एक तुम्हारे चरणकमल में हुआ विसर्जित सब संसार।
रहे एक स्वामी बस, तुम ही, करो सदा स्वच्छन्द विहार।।

जैसे तेरे नूपुर न बाजहीं, प्यारी!
पग हौले हौले धर, पग हौले हौले धर।।
जागत ब्रज कौ लोग नाहीं सुनायबे जोग
हा हा री हठीली नेंक, मेरौ कह्यौ कर।।
जो लौं बन बीथिन माँहिं, सघन कुंज की परछाहिं
तो लौं मुख ढाँप चल, कुँवर रसिक बर।
नंददास प्रभु प्यारी, छिनहूँ न होय न्यारी
सरद उजियारी जामें जैहें कहुँ रर।।

भावार्थ - हे प्यारी सखि! धीरे-धीरे चरण रख, जिससे तेरे नूपुर बजें नहीं। ब्रज के लोग अभी जग रहे हैं। उन्हें अपने नूपुरों का शब्द सुनाना उचित नहीं है। अरी हठीली! थोड़ी मेरी बात मान ले। मैं हा-हा खाती हूँ। सघन कुजों की छाया से युक्त वन-बीथियाँ जब तक नहीं आ जातीं, तब तक तू मुख को ढककर रसिक शिरोमणि नन्दकिशोर के पास चल। नन्ददास जी कहते हैं - प्यारी श्रीराधे! प्रभु से क्षण भर के लिये विलग न रह। आज शरद ऋतु की उजियाली रात है, उस चाँदनी में तुम्हारा गोरा शरीर इस प्रकार मिल जायेगा कि किसी को तुम्हारा पता ही नहीं चलेगा।

....

वृन्दावन की है यह मंगल लीला, याद आवे, याद आवे
कृष्ण कन्हैया छैल छबीला, याद आवे याद आवे।
सखियन सँगे घाटे जाना, निर्मल जमुना नीर नहाना।
सब मिलकर प्रीतम गुन गाना, कभी कभी वल्लभ दर्शन पाना।।
कानन में फुलवन का खिलना, नभ में तारों का झिलमिलना।
मुरली धुन सुन दिल तिलमिलना, कुंजन कुंजन मोहन मिलना।।
चांदनी रातें रास रचाना, कृष्ण रंग में हृदय रंगाना।
अपना खोकर पिया मिलाना, याद आवे याद आवे।।
कोई कहे यह मीठा सपना कृष्ण कहानी कवि मन रचना।
मेरी नहीं कछु सुनना कहना, मोहे तो ब्रज लालन ललना।।

....

स्याम तन स्याम मन स्याम है हमारो धन,
आठों जाम ऊधौ हमें स्याम ही सों काम है । [1]
स्याम हिये स्याम जिये स्याम ही है प्राण पिय,
आँधेकी-सी लाकरी आधार स्याम नाम है ।। [2]
स्याम गति स्याम मति स्याम ही है प्रानपति,
स्याम सुखदाई सों भलाई सोभाधाम है । [3]
ऊधो तुम भए बौरे पाती लैके आए दौरे,
जोग कहाँ राखैं यहाँ रोम-रोम स्याम है ।। [4]

भावार्थ - हे उद्धव! हमारा तन मन धन श्याम को ही समर्पित है।
दिन के आठों पहरों में हमारा श्री श्यामसुंदर से ही प्रयोजन है।
श्याम ही हमारे हृदय में प्राण प्रियतम के रूप में रहते हैं। जैसे अंधे का सहारा लाठी होती है उसी प्रकार श्री श्याम नाम ही हमारा आधार है। हमारे हर विचार में और हमारी हर गति में श्री श्याम सुंदर ही प्राण पति रूप में छाए हुए हैं। श्याम ही समस्त सुख,भलाई व शोभा के निवास स्थान हैं। अरे उद्धव तुम तो भोले ही रह गए जो उनका पत्र लेकर हमारे पास दौड़े चले आए। यहां योग के लिए कोई स्थान ही नहीं है क्योंकि यहां रोम–रोम में तो श्याम सुंदर ही बसे हुए है।

....

सघन कुंज की छाँह मनोहर सुमन सेज बैठे पिय प्यारी।
अरस परस अंसनि भुज दीने नंद नंदन वृषभानु दुलारी।।
नख सिख अंग सिंगार सुहावत इहि छवि सम नाहिन उपमा री।
रस बस करत प्रेम की बतियाँ हँसि हँसि देत परस्पर तारी।।
सनमुख सकल सहचरी ठाढ़ी बिहरत श्री राधा गिरधारी।
गोबिंददास निरखि दम्पति सुख तन मन धन कीनो बलिहारी।।

भावार्थ - सघन कुंज की अत्यंत मनोहर छाया में कुसुम शैय्या पर प्यारी श्रीराधा तथा प्रियतम नंदनंदन श्री कृष्ण बैठे हैं। दोनों परस्पर स्पर्श करते हुए एक दूसरे के कंधों पर भुजाएं रखे हुए हैं। श्री अंगों में नख से शिख तक श्रृंगार सुशोभित हो रहा है। इस छवि की कोई उपमा नहीं है। रस के वशीभूत होकर वे प्रेमालाप कर रहे हैं और हंस-हंसकर एक दूसरे के हाथ पर ताली बजा रहे हैं। श्री राधा-कृष्ण विहार कर रहे हैं और सामने सब सखियां खड़ी है। श्री गोविंद दास जी ने इन युगल विहारिणी-विहारी का यह आनंद विहार देखकर अपना तन,मन,धन इन तीनों को उन पर न्योछावर कर दिया।

....

आगे प्रवाह बढ़ता क्रमशः उन दोनों के रसका, प्रियतम!
वे अहो! कहाँ-से-कहाँ जुड़े उसमें बहते रहते, प्रियतम!
पीछे आने का प्रश्न नहीं उस धारा में बनता, प्रियतम!
वे सृजन और संहार जनित परिणाम न उसमें हैं, प्रियतम!

जो हो, वह घटना है तबकी, दोनों जब उत्सुक थे, प्रियतम!
श्रृंगार धराने की इच्छा ले गौर-नील तनमें, प्रियतम!
दोनों में होड़ लगी थी यह, है कला किसे कहते, प्रियतम!
दिखलायें आज परस्पर की पहली इस रचना में, प्रियतम!

प्यारी को देख-देखकर ही प्यारे रचना करते, प्रियतम!
प्यारे को देख-देखकर ही प्यारी रचना करती, प्रियतम!
अपने ही आप अँगुलियों में उनकी वे आ जाते, प्रियतम!
उपकरण सभी, आवश्यक जो जितने जब थे होते, प्रियतम!

प्राणों की अभिलाषा ही वह माला बनकर आती, प्रियतम!
प्राणों का ही उल्लास सुमन सुरभित होकर आता, प्रियतम!
प्राणों का स्नेह विमल नीला-पीला फुलेल बनता, प्रियतम!
प्राणों का ही अनुराग तरल शीतल विलेप होता, प्रियतम!

प्राणों की वृत्ति सदा नव सुख देने-ही-देने की, प्रियतम!
प्राणों की आशा नित्य नये रसमें सन जाने की, प्रियतम!
प्राणों की वह अभिसंधि मिले रहने की आपस में, प्रियतम!
प्राणों से झर से सब बनतीं, तूली छवि लिखने की, प्रियतम!

प्राणोंकी ममता ही काली-कबरी डोरी बनती, प्रियतम!
प्राणों का मोह परस्पर, वह काजल बन जाता था, प्रियतम!
प्राणों का अद्व्यपन-मद चू, भ्रू-मध्य-बिन्दु बनता, प्रियतम!
प्राणों का प्रणय-रोष होता, वह लाल महावर था, प्रियतम!

प्राणों में बढ़ी प्रीति टेढ़ी, चलकर कँगही बनती, प्रियतम!
प्राणों की रति परिणत होती उज्जवलतम, दर्पण में, प्रियतम!
प्राणों में बढ़ी हुई पल-पल आसक्ति पान होती, प्रियतम!
प्राणों की ही रुचि बन जाती अम्बर नीला-पीला, प्रियतम!

प्राणों का संचालन बनता आवरण पयोधरका, प्रियतम!
प्राणों के स्वर वे सात बन्द चोली के हो जाते, प्रियतम!
प्राणों का ही विश्वास अचल, वह पुष्पसार बनता, प्रियतम!
प्राणों की सुन्दरता होती लीला-नीरज करका, प्रियतम!

यों स्वतः हुई प्रस्तुत चिन्मय सामग्री लेकर वे, प्रियतम!
तल्लीन हुए निरूपम रचना करने लग गये वहाँ, प्रियतम!
भावों से कर हिल-हिलकर, था कुछ-का-कुछ बन जाता, प्रियतम!
दो-तीन बार में ही पूरा श्रृंगार धरा पाते, प्रियतम!

हो गयी वेश-रचना, तब वे कहने इस भाँति लगे, प्रियतम!
'किसने बाजी जीती बोलो', 'पहले तुम', 'तुम पहले' प्रियतम!
कोई सम्मत न हुआ, निर्णय जो पहले बतलाये, प्रियतम!
बस, झूल-झूलकर हँसते वे, गलबाँही दिये हुए, प्रियतम!

आखिर बोली प्यारी-'प्यारे! तुम अहो! विजेता हो' प्रियतम!
बोला प्यारा - 'सच हे प्यारी! श्री-कर में ही जय है' प्रियतम!
दोनों ही दुहराते जाते अपनी ही उक्ति, भला, प्रियतम!
मुखरित निकुञ्ज वनका कण-कण होता उस मधुरवसे, प्रियतम।।

'क्या सत्य कभी दो है होता? है नित्य एक वह तो, प्रियतम!
प्यारी विचारकर तुम देखो, है उक्ति सही मेरी', प्रियतम!
'हे प्यारे है स्वीकार मुझे, यह सत्य एक ही है, प्रियतम!
सोचो तुम बार-बार अब भी, मेरा कहना सच है' प्रियतम!

भावार्थ - सम्पूर्ण वातावरण की इस नवीनता, इस उन्मादिता से भावित श्रीप्रिया-प्रियतम के आनन्द का प्रवाह भी उत्तरोत्तर बढ़ता चला जा रहा है। इतने में ही प्रेमसिन्धु की ऊर्मियों में डूबते-उतराते श्री प्रिया-प्रियतम के हृदय में परस्पर श्रृंगार रचना करने की इच्छा जागृत हुई। युगल दम्पत्ति अत्यन्त प्रेम सिक्त हुए एक-दूसरे का श्रृंगार प्रारम्भ करते हैं। जिसमें प्रिया अपने प्राणों की अभिलाषा रूप माला ही प्रियतम के कण्ठ प्रदेश में अलंकृत करती हैं। और प्रियतम श्यामसुन्दर प्रेम रूपी अंजन से प्रिया के नेत्र आंजते हैं। इस प्रकार वे दिव्य भावों से परस्पर का श्रृंगार कर रहे हैं। परस्पर श्रृंगार रचना के बाद प्रिया-प्रियतम दर्पण में अपना सौन्दर्य निहारते हुये एक दूसरे को विजेता घोषित कर गलबाहीं दिये आनन्दित हो रहे हैं।

बन नाचे नट नीको आली नन्द को किशोर।
राधे जगत नचायो तेरी भौं की मरोर।।
ब्रज के किशारे तौ पै डारूँ तृण तोर प्यारो।
सुनी मुरली की धुन मेरो मन भयो मोर।।
कमल कली को रँग भानु की लली को स्यामा।
मुख चंद्रहुँ सो नीको मेरे नयना हैं चकोर।।
ग्रीवा की लटक हरे नयन की मटक।
करे चित्त पै झपट पीरे पटका को छोर।।
मुख की भुराई भाल बिंदिया सजाई।
मानो छीर सिन्धु माहीं बाल रवि उग्यो भोर।।
नयनन बसाय तोहैं राखूँगी छिपाये प्यारो।
कहूँ भाग न जाय मेरी मुँदरी को चोर।।
मन स्याम रँग दिन रैन राखो सँग प्यारी।
कहाँ जायेगी पतँग तेरे हाथ में है डोर।।

भावार्थ - हे राधे, देखो! नटनागर नन्दकिशोर श्रीकृष्ण वन में अति सुन्दर नृत्य कर रहे हैं। ऐसा क्यों न हो! जब आपकी भृकुटि के विलास से समस्त जगत नाचता है - तो आपके प्रियतम श्रीकृष्ण नृत्य में प्रवृत्त हों, इसमें आश्चर्य ही क्या है?

श्रीराधा कहती हैं, हे बृजकिशोर! मैं आप पर तृण तोड़कर अपना सर्वस्व बलिहार देती हूँ (समर्पण कर देती हूँ)। आपकी मुरली की टेर सुनकर तो मेरा मन मोर के समान नृत्य करने लगता है। श्रीकृष्ण कहते हैं, हे वृषभानु की पुत्री राधे! आपका रंग कमल कली के समान अरूणाई लिये हुए है। आपका मुख चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर है और मेरे नेत्र चकोर पक्षी के समान उनको निहारते-निहारते अघाते नहीं हैं। श्रीराधा कहती हैं, हे प्यारे आपका ग्रीवा (गर्दन) को एक ओर झुका देना एवं नयनों का मटकाना मेरे मन को हर लेता है, उससे मेरे मन का भटकाव रूक जाता है (अर्थात् मेरा मन आपकी इस अदा को निहारने में टिक जाता है)। आपके पीले पटके की छोर इतनी सुंदर है कि उसका दर्शन मेरे मन में (बिजली के समान) कौंध जाता है। श्रीकृष्ण कहते हैं , हे राधे! आपके मुख पर जो पीलेपन की झांकी है, उस पर जो आपने अपने सुंदर माथे के मध्य में लाल बिंदी सजाई है - ऐसे लगता है जैसे दूध का सागर हो, और उसमें सुबह का लाल-लाल सूरज उग रहा हो। श्रीराधा कहती हैं, हे प्यारे! आपको नैनों में बसाकर, छिपाकर रखूँगी। (डर लगता है कि) मेरी अँगूठी के चोर (आप) कहीं भाग न जाएं (यहाँ यह एक अन्य लीला की ओर संकेत है जिसमें श्रीकृष्ण राधाजी की अँगूठी चुराकर ले जाते हैं) श्रीकृष्ण कहते हैं, हे राधे! मेरा मन तो निरंतर आपके रंग में रंगा हुआ है, मुझे आप कृपा करके दिन-रात अपने पास ही रखिएगा। वैसे भी ये पतंग (अर्थात् मैं) कहाँ जायेगी, अब मेरी डोर आपके ही हाथ में है।

सोनजुही की बनी पगिया अरू चमेली को गुच्छ रहयौ झुकि न्यारो।
द्वै दल फूल कदंब के कुंडल सेवती जामाहु घूम घुमारो।।
नौ तुलसी पटुका घनस्याम गुलाब इजार चमेली को न्यारो।
फूलन आज विचित्र बन्यौ देखो कैसो सिंगारयो है प्यारी ने प्यारो।।

भावार्थ - और इधर देखो! राधा प्यारी ने अद्भुत पुष्प-रचना के द्वारा प्यारे श्रीकृष्णचन्द्र का कैसा शृंगार किया है। सोनजुही पुष्पों की तो पगड़ी बनी हुई है, जिसमें चमेली का एक गुच्छा निराली अदा से लटक रहा है। कदम्ब पुष्पों का खूब घेरदार जामा है। नीलसुन्दर की विविध रंगवाली चादर की छवि और भी निराली है, जिसमें नाना वर्णों के नव तुलसीदल, विभिन्न प्रकार के गुलाब, गेंदा और चमेली के पुष्पों का उपयोग किया गया है।

....

नाचत बलभद्र वीर संग लिये युवती भीर।
रास रच्यौ दिव्य तीर तनिया कलिन्दकी।।
नाच उठी यमुनलहर चन्द चाँदनी को पहर।
पीत पटि लहर-लहर नाची नन्द-नन्द की।।
नचे बाल तालन पै श्रम बिन्दु भालन पै।
सजी कमल मालन पै अवलि अलि वृन्द की।।
राधा रंग राच रही पलक खोल जाँच रही।
नैनन में नाच रही मूरति गोविन्द की।।

भावार्थ - बलराम के भाई श्रीकृष्ण युवतियों की भीड़ को लेकर नृत्य कर रहे हैं। पीताम्बर धारण किये हुए भगवान् श्रीकृष्ण यमुनाजी के दिव्य तट पर रास कर रहे हैं। एक ओर चाँदनी में चमकती यमुनाजी की लहरें नृत्य कर रही हैं, तो दूसरी ओर श्री कृष्ण का चमकता हुआ पीताम्बर लहरा रहा है। सभी ब्रजबालाऐं संगीत की ताल पर नृत्य कर रही हैं, जिससे उनके मस्तक पर श्रम बिंदु झलक रहे हैं। समस्त सखी मण्डल के वक्षः स्थल पर कमलों की मालाएं सजी हुई हैं जिसपर भौरों की पंक्तियाँ मँडरा रही हैं। राधारानी इस रचे हुए रंग को पलक खोलकर निहार रही है परंतु वास्तव में उनके खुले हुए नेत्रों के समक्ष श्री गोविन्द की मूर्ति ही नृत्य करती हुई प्रतीत हो रही है।”

....

सारी सँवारी है सोनजुही अरू जूही की तापै लगाई किनारी।
पंकज के दल को लहँगा अंगिया गुलबाँस की सोभित न्यारी।।
चम्पा को हार हमेल गुलाब को मौर की बेंदी दे भाल सँवारी।।
फूलन आज बिचित्र बन्यो देखो कैसी सिंगारी है प्यारे ने प्यारी।।

भावार्थ - देखो! प्यारे श्रीकृष्ण ने अद्भुत ढंग से सजाकर प्रियाजी का आज कैसा शृंगार किया है! सोनजुही पुष्पों की साड़ी सजायी है, जिसमें जूही की किनारी लगी हुई है। कमल-पुष्प दलों से लहँगा बनाया है और गुलबाँस की कञ्चुकी (चोली) अपनी निराली ही छटा दिखा रही है। चम्पा के पुष्पों का हार बनाया है और गुलाब का हमेल है तथा ललाट पर मोलगिसरी के फूल की बेदी शोभा दे रही है।

....

तालन पै ताल पै तमाल माल मालन पै। वृन्दावन वीथिन विहार वंशी वट पै।।
छित पै छात पै छाजत छटान पै। ललित लतान पै श्री लाडली की लट पै।।
कहे पद्माकर अखण्ड रास मण्डल पै। मण्डित उमण्डित श्री कालन्दी के तट पै।।
कैसी छवि छाई आज सरद जुन्हाई। कैसी छवि छाई या कन्हाई के मुकुट पै।।

भावार्थ - श्री वृन्दावन की शरद रात्रि की शोभा का वर्णन करते हुए रसिक कवि पद्माकर कहते हैं कि ताल और तमाल वृक्षों की श्रेणियों पर, श्री वृन्दावन की सुन्दर विहार-पगडंडियों पर, निकुंज भवनों के छज्जों पर, सुन्दर लताओं पर, श्री लाडिली जी की गिरती हुई कुन्तलों पर, यहाँ तक कि सम्पूर्ण रास मंडल पर, शरद रात्रि की चाँदनी अतिशय सुन्दर ढंग से चमक रही है। और इस चाँदनी की सबसे सुन्दर छटा तो श्री कन्हैया के मुकुट से छिटक रही है।

....